श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 4

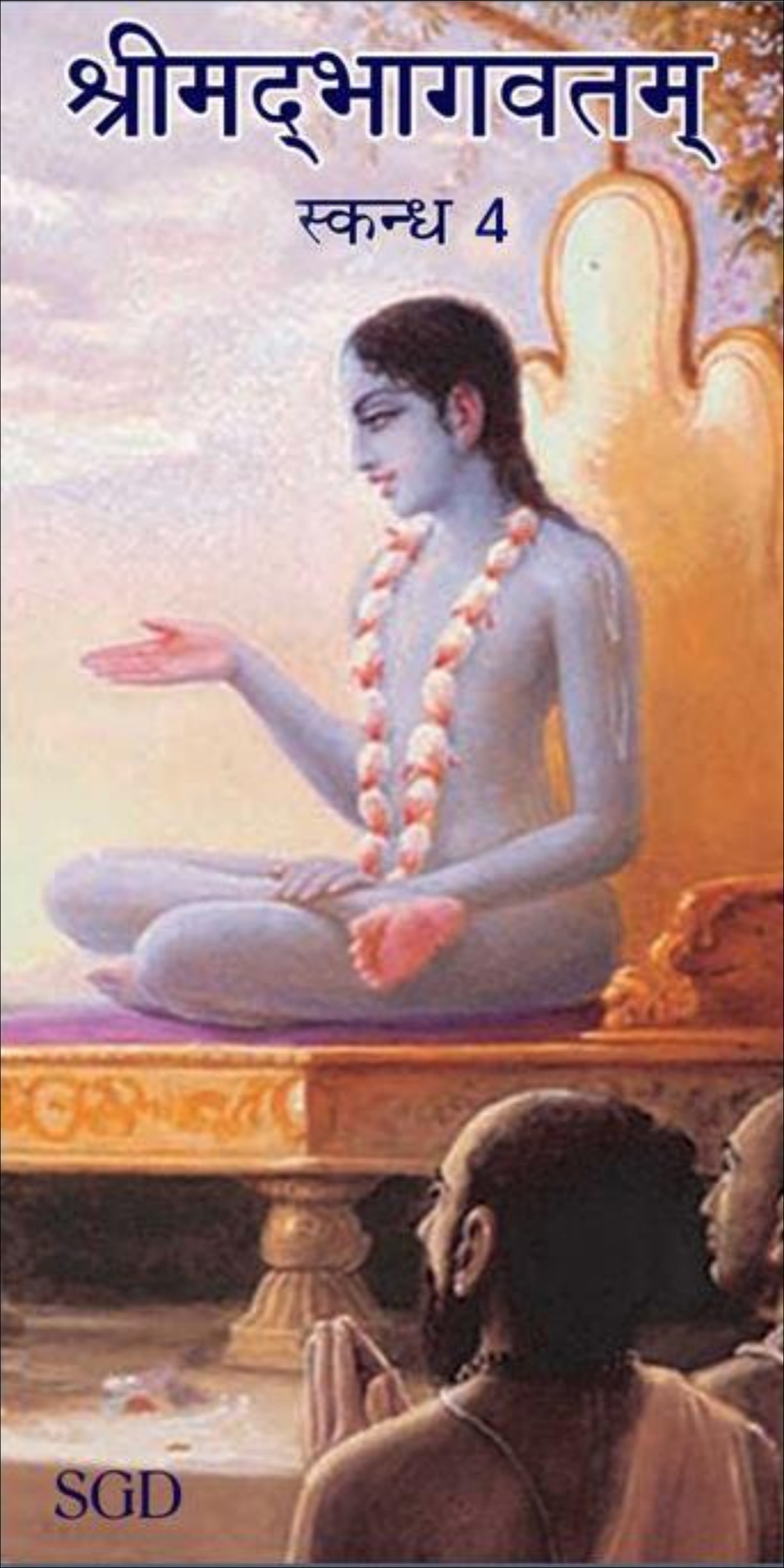

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 19

राजा पृथु के एक सौ अश्वमेध यज्ञ

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: महर्षि मैत्रेय ने आगे कहा : हे विदुर, राजा पृथु ने उस स्थान पर जहाँ सरस्वती नदी पूर्वमुखी होकर बहती है, एक सौ अश्वमेध यज्ञ आरम्भ किए। यह भूखण्ड ब्रह्मावर्त कहलाता है, जो स्वायंभुव मनु द्वारा शासित था।

श्लोक 2: जब स्वर्ग के राजा सर्वाधिक शक्तिशाली इन्द्र ने यह देखा तो उसने विचार किया कि सकाम

कर्मों में राजा पृथु उससे बाजी मारने जा रहा है। अत: वह राजा पृथु द्वारा किये जा रहे यज्ञ- महोत्सव को सहन न कर सका।

श्लोक 3: भगवान् विष्णु हर प्राणी के हृदय में परमात्मा-रूप में स्थित हैं। वे समस्त लोकों के स्वामी तथा समस्त यज्ञ-फलों के भोक्ता हैं। वे राजा पृथु द्वारा किये गये यज्ञों में साक्षात् उपस्थित थे।

श्लोक 4: जब भगवान् विष्णु यज्ञस्थल में प्रकट हुए तो उनके साथ

ब्रह्माजी, शिवजी तथा सभी लोकपाल एवं उनके अनुचर भी थे। जब वे वहाँ प्रकट हुए तो गन्धर्वलोक-निवासियों, ऋषियों तथा अप्सरा लोक के निवासियों सभी ने मिलकर प्रशंसा की।

श्लोक 5: भगवान् के साथ में सिद्धलोक तथा विद्याधर लोक के वासी, दिति की समस्त सन्तानें, असुर तथा यक्षगण थे। उनके साथ सुनन्द तथा नन्द इत्यादि उनके प्रमुख पार्षद भी थे।

श्लोक 6: भगवान् विष्णु के साथ भगवान् की सेवा में सदैव लगे रहनेवाले परम भक्तगण अर्थात् कपिल, नारद तथा दत्तात्रेय नामक ऋषि और साथ ही साथ सनत्कुमार इत्यादि योगेश्वर उस यज्ञ में सम्मिलित हुए।

श्लोक 7: हे विदुर, उस महान् यज्ञ में सारी भूमि दूध देनेवाली कामधेनु बन गई और इस प्रकार यज्ञ सम्पन्न करने से जीवन की समस्त आवश्यकताएँ पूरी होने लगीं।

श्लोक 8: बहती हुई नदियाँ समस्त प्रकार के स्वाद—मीठा, खट्टा, चटपटे इत्यादि—प्रदान करने लगीं तथा बड़े-बड़े वृक्ष प्रचुर मात्रा में फल तथा मधु देने लगे। गायें पर्याप्त हरी घास खाकर प्रभूत मात्रा में दूध, दही, घी तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ देने लगीं।

श्लोक 9: सामान्य जनों तथा समस्त लोकों के प्रमुख देवों ने राजा पृथु को तरह-तरह के उपहार लाकर प्रदान किये। समुद्र अमूल्य रत्नों से

तथा पर्वत रसायनों एवं उर्वरकों से पूर्ण थे। चारों प्रकार के खाद्य पदार्थ प्रभूत मात्रा में उत्पन्न होते थे।

श्लोक 10: राजा पृथु पुरुषोत्तम भगवान् पर आश्रित थे जिन्हें अधोक्षज कहा जाता है। राजा पृथु ने इतने यज्ञ सम्पन्न किये थे कि ईश्वर की कृपा से उनका अत्यधिक उत्कर्ष हुआ था। किन्तु उनका यह ऐश्वर्य स्वर्ग के राजा इन्द्र से न सहा गया और उसने इसमें विघ्न डालने की चेष्टा की।

श्लोक 11: जिस समय महाराज पृथु अन्तिम अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे, तो इन्द्र ने अदृश्य होकर यज्ञ का घोड़ा चुरा लिया। उसने राजा पृथु के प्रति ईर्ष्या भाव से ही ऐसा किया।

श्लोक 12: घोड़े को ले जाते समय राजा इन्द्र ने ऐसा वेष धारण कर रखा था जिससे वह मुक्त पुरुष जान पड़े। वास्तव में उसका यह वेष ठगी के रूप में था, क्योंकि इससे झूठे ही धर्म का बोध हो रहा था। इस प्रकार जब इन्द्र आकाश मार्ग में पहुँचा

तो अत्रि मुनि ने उसे देख लिया और समझ गये कि स्थिति क्या है।

श्लोक 13: जब अत्रि मुनि ने राजा पृथु के पुत्र को राजा इन्द्र की चाल बतायी तो वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और “ठहरो! ठहरो!!” कहते हुए इन्द्र को मारने के लिए उसका पीछा करने लगा।

श्लोक 14: राजा इन्द्र ने संन्यासी का कपट-वेष धारण कर रखा था, उसके सिर पर जटा-जूट था और सारा शरीर राख से पुता था। ऐसे

वेश में देखकर राजा पृथु के पुत्र ने इन्द्र को धर्मात्मा तथा पवित्र संन्यासी समझा, अत: उसने उस पर अपने बाण नहीं छोड़े।

श्लोक 15: जब अत्रि मुनि ने देखा कि राजा पृथु के पुत्र ने इन्द्र को नहीं मारा वरन् उससे धोखा खाकर वह लौट आया है, तो मुनि ने पुन: उसे स्वर्ग के राजा को मारने का आदेश दिया, क्योंकि उनके विचार से इन्द्र राजा पृथु के यज्ञ में विघ्न डाल

कर समस्त देवताओं में सबसे अधम बन चुका था।

श्लोक 16: इस प्रकार सूचित किये जाने पर राजा वेन के पौत्र ने तुरन्त इन्द्र का पीछा करना प्रारम्भ किया, जो तेजी से आकाश से होकर भाग रहा था। वह उस पर अत्यन्त कुपित हुआ और उसका पीछा करने लगा मानो गृद्धराज रावण का पीछा कर रहा हो।

श्लोक 17: जब इन्द्र ने देखा कि पृथु का पुत्र उसका पीछा कर रहा है,

तो उसने तुरन्त ही अपना कपट वेष त्याग दिया और घोड़े को छोड़ कर वह उस स्थान से अन्तर्धान हो गया। महाराज पृथु का महान् वीर पुत्र घोड़े को लेकर अपने पिता के यज्ञस्थल में लौट आया।

श्लोक 18: हे विदुर महाशय, जब ऋषियों ने राजा पृथु के पुत्र का आश्चर्यजनक पराक्रम देखा तो सबों ने उसका नाम विजिताश्व रखना स्वीकार किया।

श्लोक 19: हे विदुर, स्वर्ग का राजा तथा अत्यन्त शक्तिशाली होने के कारण इन्द्र ने तुरन्त यज्ञस्थल पर घोर अंधकार फैला दिया। इस प्रकार पूरे स्थल को प्रच्छन्न करके उसने पुन: वह घोड़ा हर लिया जो बलि-स्थल पर काष्ठ-यंत्र के समीप सोने की जंजीर से बँधा था।

श्लोक 20: अत्रि मुनि ने राजा पृथु के पुत्र को पुन: दिखलाया कि इन्द्र आकाश से होकर भागा जा रहा है। परम वीर पृथु-पुत्र ने पुन: उसका

पीछा किया। किन्तु जब उसने देखा कि उसने हाथ में जो दण्ड धारण कर रखा है उस पर खोपड़ी लटक रही है और वह पुन: संन्यासी वेश में है, तो उसने उसे मारना उचित नहीं समझा।

श्लोक 21: जब अत्रि मुनि ने पुन: आदेश दिया तो राजा पृथु का पुत्र अत्यन्त कुपित हुआ और उसने अपने धनुष पर बाण चढ़ा लिया। यह देख कर राजा इन्द्र ने तुरन्त संन्यासी का वह कपट वेष त्याग दिया और

घोड़े को छोड़ कर वह स्वयं अदृश्य हो गया।

श्लोक 22: तब परम वीर पृथु-पुत्र विजिताश्व पुन: वह घोड़ा लेकर अपने पिता के यज्ञ स्थल पर लौट आया। उसी काल से, कुछ अल्पज्ञानी पुरुष छद्म संन्यासी का वेष धारण करने लगे हैं। राजा इन्द्र ने ही इसका सूत्रपात किया था।

श्लोक 23: इन्द्र ने घोड़े को चुरा ले जाने की इच्छा से संन्यासी के जो

जो रूप धारण किये, वे नास्तिकवाद दर्शन के प्रतीक हैं।

श्लोक 24-25: इस प्रकार पृथु महाराज के यज्ञ से घोड़े को चुराने के लिए राजा इन्द्र ने कई प्रकार के संन्यास धारण किये। कुछ संन्यासी नंगे रहते हैं और कभी-कभी लाल वस्त्र धारण करते हैं—वे कापालिक कहलाते हैं। ये इनके पापकर्मों के प्रतीक मात्र हैं। ऐसे तथाकथित संन्यासी पापियों द्वारा अत्यन्त समादृत होते हैं, क्योंकि वे नास्तिक

होते हैं और अपने को सही ठहराने के लिए तर्क प्रस्तुत करने में अत्यन्त पटु होते हैं। किन्तु हमें ज्ञान होना चाहिए कि ऐसे लोग ऊपर से धर्म के समर्थक प्रतीत होते हैं, किन्तु वास्तव में होते नहीं। दुर्भाग्यवश मोहग्रस्त व्यक्ति इन्हें धार्मिक मानकर इनकी ओर आकृष्ट होकर अपना जीवन विनष्ट कर लेते हैं।

श्लोक 26: अत्यन्त पराक्रमी महाराज पृथु ने तुरन्त अपना धनुष-बाण ले लिया और वे इन्द्र को मारने

के लिए सन्नद्ध हो गये, क्योंकि इन्द्र ने इस प्रकार के अनियमित संन्यास का सूत्रपात्र किया था।

श्लोक 27: जब पुरोहितों तथा अन्य सबों ने महाराज पृथु को अत्यन्त कुपित तथा इन्द्र वध के लिए उद्यत देखा तो उन्होंने प्रार्थना की : हे महात्मा, उसे मत मारें, क्योंकि यज्ञ में केवल यज्ञ-पशु का ही वध किया जा सकता है। शास्त्रों में ऐसे ही आदेश दिये गये हैं।

श्लोक 28: हे राजन्, आपके यज्ञ में विघ्न डालने के कारण इन्द्र का तेज वैसे ही घट चुका है। हम अभूतपूर्व वैदिक मंत्रों के द्वारा उसका आवाहन करेंगे। वह अवश्य आएगा। इस प्रकार हम अपने मंत्र-बल से उसे अग्नि में गिरा कर देंगे, क्योंकि वह आपका शत्रु है।

श्लोक 29: हे विदुर, राजा को यह सलाह दे चुकने पर, यज्ञ करने में जुटे हुए पुरोहितों ने क्रोध में आकर स्वर्ग के राजा इन्द्र का आवाहन

किया। वे अग्नि में आहुति डालने ही वाले थे कि वहाँ पर ब्रह्माजी प्रकट हुए और उन्होंने यज्ञ आरम्भ करने से रोक दिया।

श्लोक 30: ब्रह्माजी ने उन्हें इस प्रकार सम्बोधित किया : हे याजको, आप स्वर्ग के राजा इन्द्र को नहीं मार सकते, यह कार्य आपका नहीं है। आपको जान लेना चाहिए कि इन्द्र भगवान् के ही समान हैं। वस्तुत: वे भगवान् के सबसे अधिक शक्तिशाली सहायक हैं। आप इस यज्ञ द्वारा

समस्त देवताओं को प्रसन्न करना चाह रहे हैं, किन्तु आपको ज्ञात होना चाहिए कि ये समस्त देवता स्वर्ग के राजा इन्द्र के ही अंश हैं। तो फिर आप इस महान् यज्ञ में उनका वध कैसे कर सकते हैं?

श्लोक 31: राजा पृथु के महान् यज्ञ में विघ्न डालने तथा आपत्ति उठाने के उद्देश्य से राजा इन्द्र ने ऐसे साधन अपनाये हैं, जो भविष्य में धार्मिक जीवन के सुपथ को नष्ट कर सकते हैं। मैं इस ओर आप लोगों का

ध्यान आकृष्ट कर रहा हूँ। यदि आप और अधिक विरोध करेंगे तो वह अपनी शक्ति का दुरुपयोग करके अनेक अधार्मिक पद्धतियों को फैलाएगा।

श्लोक 32: ब्रह्माजी ने अन्त में कहा : "बस, महाराज पृथु के निन्यानब्वे यज्ञ ही रहने दो।" फिर वे महाराज पृथु की ओर मुड़े और उनसे कहा "आप मोक्ष मार्ग से भलीभाँति परिचित हैं, अत: आपको

और अधिक यज्ञ करने से क्या मिलेगा?”

श्लोक 33: ब्रह्माजी ने कहा : आप दोनों का कल्याण हो क्योंकि आप तथा इन्द्र दोनों ही भगवान् के अंश हैं। अत: आपको इन्द्र पर क्रुद्ध नहीं होना चाहिए; वह आपसे अभिन्न है।

श्लोक 34: हे राजन्, दैवी व्यवधानों के कारण उचित रीति से आप के यज्ञ सम्पन्न न होने पर आप तनिक भी क्षुब्ध तथा चिन्तित न हों।

कृपया मेरे वचनों को अति आदर भाव से ग्रहण करें। सदैव स्मरण रखें कि प्रारब्ध से जो कुछ घटित होता है उसके लिए हमें अधिक दुखी नहीं होना चाहिए। ऐसी पराजयों को सुधारने का जितना ही प्रयत्न किया जाता है, उतना ही हम भौतिकतावादी विचार के घने अंधकार में प्रवेश करते हैं।

श्लोक 35: ब्रह्माजी ने आगे कहा : इन यज्ञों को बन्द कीजिये क्योंकि इनके कारण इन्द्र अनेक अधर्म कर

रहा है। आपको भली भाँति ज्ञात होना चाहिए कि देवताओं में भी अनेक अवांछित कामनाएँ होती हैं।

श्लोक 36: जरा देखिये कि राजा इन्द्र यज्ञ के घोड़े को चुरा कर किस प्रकार यज्ञ में विघ्न डाल रहा था! उसके द्वारा प्रचारित मनोहर पापमय कार्य सामान्य जनों द्वारा आगे बढ़ाये जाते रहेंगे।

श्लोक 37: हे वेन-पुत्र राजा पृथु, आप भगवान् विष्णु के अंश हैं। राजा वेन के उत्पाती कार्यों के कारण धर्म

प्राय: लुप्त हो चुका था। आपने उचित समय पर भगवान् विष्णु के रूप में अवतार लिया। निस्सन्देह, आप धर्म की रक्षा के लिए ही राजा वेन के शरीर से प्रकट हुए हैं।

श्लोक 38: हे प्रजा-पालक, विष्णु द्वारा प्रदत्त अपने इस अवतार के उद्देश्य पर विचार कीजिये। इन्द्र द्वारा सर्जित अधर्म अनेक अवांछित धर्मों की जननी है। अत: आप तुरन्त ही इन पाखण्डों का अन्त कर दीजिये।

श्लोक 39: महर्षि मैत्रेय ने आगे कहा : जब परम गुरु ब्रह्माजी ने राजा पृथु को इस प्रकार उपदेश दिया तो उन्होंने यज्ञ करने की अपनी उत्सुकता त्याग दी और अत्यन्त स्नेहपूर्वक राजा इन्द्र से सन्धि कर ली।

श्लोक 40: इसके पश्चात् पृथु महाराज ने स्नान किया, जो प्रथानुसार यज्ञ के अन्त में किया जाता है, और महिमायुक्त कार्यों से

अत्यन्त प्रसन्न देवताओं से आशीष तथा वर प्राप्त किये।

श्लोक 41: आदिराज पृथु ने उस यज्ञ में उपस्थित समस्त ब्राह्मणों को अत्यन्त सम्मानपूर्वक सभी प्रकार की भेंटें प्रदान कीं। इन ब्राह्मणों ने प्रसन्न होकर राजा को अपनी ओर से हार्दिक शुभाशीष दिये।

श्लोक 42: समस्त ऋषियों तथा ब्राह्मणों ने कहा : हे शक्तिशाली राजा, आपके आमंत्रण पर सभी वर्ग के जीवों ने इस सभा में भाग लिया है। वे

पितृलोक तथा स्वर्गलोकों से आये हैं, साथ ही सामान्यजन एवं ऋषिगण भी इस सभा में उपस्थित हुए हैं। अब वे सभी आपके व्यवहार तथा आपके दान से अत्यन्त सन्तुष्ट हैं।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव